[2002] 3 उम. नि. प. 180

कर्नाटक राज्य सड़क परिवहन निगम

बनाम

लक्ष्मी देवम्मा (श्रीमती) और एक अन्य

1 मई, 2001

न्यायमूर्ति एस. पी. भरुचा, न्यायमूर्ति वी. एन. खरे, न्यायमूर्ति एन.संतोष हेगड़े, न्यायमूर्ति वाई. के. सभरवाल और न्यायमूर्ति शिवराज वी. पाटिल

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) – धारा 10, 33(2)(ख) और 11(1) और (3) – नियोजक का सेवा के पर्यवसान के मामले की कार्यवाहियों में अतिरिक्त साक्ष्य देने का अधिकार – उक्त अधिकार कानूनी अधिकार नहीं है अपितु उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित प्रक्रिया है – ऐसे अधिकार का दावा कथन फाइल किए जाने के समय प्रयोग किया जाना चाहिए या कतिपय कार्रवाई करने के लिए मंजूरी लेने के आवेदन के समय या की गई कार्रवाई के अनुमोदन के लिए आवेदन करते समय प्रयोग किया जाना चाहिए – आंतरिक जांच दूषित पाए जाने के पश्चात् अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए किया गया आवेदन नामंजूर किए जाने को दायी

[1] (1985) 2 एस. सी. सी. 412.

[2] (1996) 3 एस. सी. सी. 507.

2001(5) eILR(PAT) SC 1

है – प्रबंधतंत्र को साक्ष्य प्रस्तुत करने का अपना अधिकार प्रथम उपलब्ध अवसर पर ही प्रयोग करना चाहिए – निर्णीतानुसरण का सिद्धांत भी लागू नहीं होता है – साक्ष्य प्रस्तुत करने का निवेदन कार्यवाहियों के समाप्त होने के पहले ही किया जा सकता है ।

प्रस्तुत मामले में, अपीलार्थी नियोजक ने श्रम न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किए जाने के पश्चात् कि प्रबंधतंत्र द्वारा की गई आंतरिक जांच दूषित थी, अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की ईप्सा की थी । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी-नियोजक की याचिका खारिज कर दी थी । जिसके विरुद्ध यह अपील फाइल की गई है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह ध्यान में रखना लाभप्रद होगा कि प्रबंधतंत्र द्वारा अपने विनिश्चय को न्यायोचित ठहराने के लिए ऐसे औद्योगिक अधिकरण अथवा श्रम न्यायालय के समक्ष विचारणाधीन साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार कानूनी अधिकार नहीं है । यह वास्तव में एक प्रक्रिया है जो इस न्यायालय द्वारा प्रबंधतंत्र और कर्मकार के बीच विवादों के निपटारे में विलंब और कार्यवाहियों की बाहुल्यता को दूर करने के लिए अधिकथित की गई है । (पैरा 8)

प्रबंधतंत्र को अधिकरण/श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हमारा यह मत है कि इस न्यायालय द्वारा शम्भूनाथ गोयल के मामले में जारी किए गए निर्देशों के उचित तथा निष्पक्ष होने के कारण उससे अलग मत व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं है । प्रबंधतंत्र की ओर से इस प्रक्रिया के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं की जा सकती क्योंकि प्रबंधतंत्र द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करने के इस अवसर की मात्र अनुकल्पिक अभिवचन के रूप में ईप्सा की जा रही है और आंतरिक जांच में अवैधता की स्वीकारोक्ति के रूप में । इसके साथ ही यह कर्मकार के लिए भी लाभदायक है क्योंकि यह तथ्य उनकी अवेक्षा में लाया जाएगा कि प्रबंधतंत्र नया साक्ष्य पेश करने वाला है और इसलिए वह अपना खंडन अथवा अन्य साक्ष्य तैयार रख सके । यह प्रक्रिया प्रबंधतंत्र के द्वारा विलम्बित आवेदन प्रस्तुत करने के द्वारा विलम्ब करने की संभाव्यता को दूर करती है जिसके कारण श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष कार्यवाही लंबी हो सकती है । हमारे विचार से शम्भूनाथ गोयल के मामले में अधिकथित प्रक्रिया उचित तथा निष्पक्ष है । **'शम्भू नाथ गोयल'** के मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित प्रक्रिया को स्वीकार किए जाने के लिए एक अन्य कारण भी है । यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यह निर्णय 27 सितम्बर, 1983 को परिदत्त किया गया था । इसमें इस न्यायालय के लगभग सभी पूर्व निर्णयों को आवेक्षा में लिया गया है और इसमें प्रबंधतंत्र के द्वारा साक्ष्य पेश करने के अधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रक्रिया अधिकथित की गई है जिसको हमने न तो अन्यायपूर्ण और न ही अधिनियम के उद्देश्यों और योजना के विपरीत अभिनिर्धारित किया है । यह निर्णय लगभग 18 वर्षों से प्रभावी रहने के कारण, हमारे मतानुसार निर्णीतानुसरण का सिद्धांत हमसे यह अपेक्षा करता है कि इस निर्णय का अनुमोदन यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाए कि एक लंबी अवधि से प्रभावी विनिश्चय को बिना किसी सशक्त कारण के अस्थिर न किया जाए । उपरोक्त कथन किए गए कारणों के आधार पर हमारा मत यह है कि इस न्यायालय द्वारा **शम्भू नाथ गोयल** बनाम **बैंक ऑफ बड़ौदा** के मामले में अधिकथित विधि इस मुद्दे पर सही विधि है । वर्तमान मामले में अपीलार्थी नियोजक ने साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा की तब तक ईप्सा नहीं की थी जब तक कि श्रम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित नहीं कर दिया था कि उनकी आंतरिक जांच दूषित थी । इन तथ्यों पर उपरोक्त कथित सिद्धांतों को लागू करते हुए हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की रिट याचिका सही तौर पर खारिज की है इसलिए यह अपील असफल होती है । यह खर्चों के प्रति आदेश करते हुए खारिज की जाती है । (पैरा 17, 18, 19 और 20)

वर्तमान मामले में हमसे किसी ऐसे मामले का विनिश्चय करने की अपेक्षा नहीं की गई है जिसमें नियोजक द्वारा साक्ष्य पेश करने के लिए प्रार्थना नहीं की गई है । हम इस प्रश्न से संबद्ध हैं कि ऐसे मामले में जिसमें प्रारंभिक विवाद्यक पर विनिश्चय के तुरंत बाद साक्ष्य पेश करने के लिए निवेदन किया गया हो किन्तु ऐसा निवेदन लिखित कथन में न किया गया हो जो कर्मकार के दावा कथन के उत्तर में औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 10 के अधीन फाइल किया गया था, तो क्या वह गुणागुण के आधार पर विचार किए बिना सीधे निरस्त होने योग्य है । ऐसा

प्रतीत होता है कि शम्भूनाथ गोयल के मामले के पहले यह संदेहास्पद नहीं था कि नियोजक श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के समाप्त होने के पूर्व साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की ईप्सा कर सकता है । इससे विचलन केवल शम्भूनाथ गोयल के मामले में हुआ था । अब यह राय व्यक्त की गई है कि यदि प्रबंधतंत्र उस प्रक्रम पर ऐसा करने का चयन नहीं करता है तो कार्यवाहियों के किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम में उस उद्देश्य के लिए प्रार्थना पत्र दाखिल करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती जिसका परिणाम विलम्ब हो सकता है जो कर्मकार के मनोबल को खंडित कर सकता है और उसको अभ्यर्पण करने के लिए बाध्य कर सकता है जो वह (कर्मकार) अन्यथा नहीं करता । इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए एक मात्र कारण जो वजनदार प्रतीत होता है, वह यह है कि प्रबंधतंत्र किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर इस प्रकार का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करने से विवर्जित है जो कार्यवाही में विलम्ब उत्पन्न कर सकती हो । (पैरा 34, 35 और 36)

कूपर इंजीनियरिंग लि. वाले मामले में, जो तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा पारित विनिश्चय था, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि श्रम न्यायालय पहले प्रारंभिक विवाद्यक का विनिश्चय करे कि क्या स्थानीय जांच के द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है और उस पर (प्रारंभिक विवाद्यक पर) विनिश्चय सुनाए जाने पर प्रबंधतंत्र को यह निश्चय करना होगा कि क्या उसको श्रम न्यायालय के समक्ष कोई साक्ष्य पेश करना है । यदि वह (प्रबंधतंत्र) कोई साक्ष्य पेश करना नहीं चाहता है तो उसको इस विवाद्यक को उसके पश्चात् किसी भी कार्यवाही में उठाने की अनुज्ञा नहीं होगी । यह ध्यान में रखना होगा कि श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष नियोजक को प्रथम बार साक्ष्य पेश करने का अवसर प्रदान करना प्रबंधतंत्र और कर्मचारी दोनों के हित में है । यह भी ध्यान में रखना होगा कि यह अवसर न दिए जाने पर अंततः विश्लेषण में कर्मकार प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकता है । शम्भूनाथ गोयल के मुख्य निर्णय के अलावा हमारे समक्ष अन्य कोई विनिश्चय प्रोद्धृत नहीं किया गया है जिसमें यह धारित किया गया हो प्रबंधतंत्र का साक्ष्य पेश करने का निवेदन अस्वीकार किए जाने योग्य है यदि उन्होंने इसके लिए निवेदन धारा 10 के अधीन निर्देश में दावा कथन के प्रतिउत्तर में दाखिल लिखित कथन में अथवा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अधीन आरंभिक प्रक्रम की कार्यवाहियों में नहीं किया गया है । यहां तक कि न्यायमूर्ति देसाई ने अपने बहुमत के निर्णय में इस पर विचार नहीं किया और यह विचार व्यक्त किया कि यदि इस प्रकार का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया हो तो श्रम न्यायालय को यह अधिकार होगा कि वह इस प्रश्न की परीक्षा करें कि साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए अथवा नहीं । (पैरा 37)

यह अभिनिर्धारित करना संभव नहीं है कि यदि नियोजक धारा 10 के अधीन कार्यवाहियों में दाखिल किए गए दावा कथन के उत्तर में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की इच्छा व्यक्त नहीं करता है अथवा जब अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अधीन एक प्रार्थना पत्र अनुमोदन के लिए दाखिल किया जाता है तो नियोजक को किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर इस उद्देश्य के लिए प्रार्थना पत्र पेश करने के द्वारा विकल्प का प्रयोग करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती। नियोजक का निवेदन यदि वह कार्यवाहियों के समाप्त होने के पहले किया गया है, श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के द्वारा गुणागुण के आधार पर किए जाने की अपेक्षा करता है और यह कोई कहने का विषय नहीं है कि श्रम न्यायालय/अधिकरण अपने विवेकाधिकार का प्रयोग सुस्थापित न्यायिक सिद्धांतों के आधार पर करेगा और ऐसा आवेदन करने में नियोजक के सद्भावी होने की परीक्षा करेगा । निर्णीतानुसरण का सिद्धांत भी लागू नहीं होता है । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले के पूर्वतर विनिश्चयों में निरंतर रूप से यह मत व्यक्त किया गया था कि साक्ष्य प्रस्तुत करने का निवेदन कार्यवाहियों के समाप्त होने के पहले किया जा सकता है । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले के तुरंत बाद राजेन्द्र झा वाले मामले में समरूप मत व्यक्त किए गए थे । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले में अधिकथित प्रक्रिया, नियोजक और कर्मकार दोनों के लिए उचित, ऋजु और युक्तियुक्त नहीं होगी । उक्त विनिश्चय में वे प्रास्थिति अर्जित नहीं की है जो निर्णीतानुसरण के सिद्धांत को आकर्षित करे । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले में अत्यंत तकनीकी मत व्यक्त किया गया है । इस पर विचार करते हुए कि हम सुविधा, समीचीनता और प्रज्ञा के नियम पर विचार कर रहे हैं और इस पर कोई कानूनी प्रतिषेध नहीं है, प्रक्रिया जो नियोजक और कर्मकार दोनों के हित के लिए फायदेमंद हो, अधिकथित किए जाने योग्य है । (पैरा 39 और 40)

जहां तक प्रस्तुत अपील का संबंध है, यह विचार करते हुए कि श्रम न्यायालय द्वारा 16 वर्षों से भी अधिक समय पहले अधिनिर्णय पारित किया गया था और यह भी कि कर्मचारी भी जैसा कि हमको सूचित किया गया है सेवानिवृत्त हो चुका है, यह उपयुक्त नहीं होगा कि संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप किया जाए । (पैरा 42)

अपनी कार्रवाई को न्यायोचित ठहराने के लिए प्रबंधतंत्र को किस प्रक्रम पर श्रम न्यायालय/अधिकरण की इजाजत साक्ष्य/अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने के लिए मांगनी चाहिए, इस प्रश्न पर न्यायमूर्ति हेगड़े ने अपने निर्णय के प्रारूप में विचार किया है और कि न्यायालय/अधिकरण की इस शक्ति पर विचार किया गया है जिसके अधीन पक्षकारों से किसी विशिष्ट मामले में उक्त मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अपेक्षा करने अथवा निर्देश देने की शक्ति पर । औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 121(1) के अनुसार न्यायालय/अधिकरण उस प्रक्रिया का अनुसरण कर सकता है जिसको वह मामले की परिस्थितियों में अधिनियम और उसके अधीन विरचित नियमों के उपबंधों के अध्यधीन और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार उचित समझता है । धारा 11(3) के अधीन श्रम न्यायालय/अधिकरण और इस धारा में उल्लिखित अन्य प्राधिकारियों को वही अधिकार प्राप्त हैं जो सिविल न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन, जब कतिपय मामलों के संबंध में विचारण किया जा रहा हो जिसमें किसी व्यक्ति को हाजिर कराना और उसकी शपथ पर परीक्षा किया जाना सम्मिलित है और दस्तावेजों और तात्विक वस्तुओं के प्रस्तुत किए जाने के लिए बाध्य करने की शक्ति निहित है । यह निरन्तर रूप से अभिनिर्धारित और स्वीकार किया गया है कि श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष कार्रवाई में साक्ष्य के कठोर नियम लागू नहीं हैं किन्तु इस प्रकार की कार्रवाई में नैसर्गिक न्याय के नियमों का अनिवार्य रूप से पालन किया जाना होता है । श्रम न्यायालयों/अधिकरणों को कार्रवाई के किसी भी प्रक्रम में किसी भी प्रकार के साक्ष्य के लेने (मंगाने) का अधिकार प्राप्त है यदि मामले के तथ्य तथा परिस्थितियां किसी विशिष्ट परिस्थिति में न्याय के उद्देश्य की पूर्ति के लिए ऐसा अपेक्षित कर दे । हम दोहराते हैं कि अनावश्यक विलंब और कार्रवाई के बाहुल्य का अनदेखा करने के लिए प्रबंधतंत्र को अपनी कार्रवाई के समर्थन में अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए न्यायालय/अधिकरण की आज्ञा अपने लिखित कथन में ही मांगनी चाहिए । किन्तु पक्षों से कार्रवाई के किसी भी प्रक्रम में इसके पहले कि वह समाप्त हो जाए अतिरिक्त साक्ष्य, दस्तावेजों को प्रस्तुत करना सम्मिलित करते हुए प्रस्तुत करने के लिए अपेक्षा करना अथवा निर्देश देना न्यायालय/अधिकरण के अधिकारों में बाधा डालना नहीं समझा जाना चाहिए यदि वह न्याय के हित में हो तथा उचित एवं आवश्यक प्रतीत होता हो । (पैरा 44 और 45)

अवलम्बित निर्णय

पैरा

[1984] [1984] 1 उम. नि. प. 179 = [1984] 1 एस. सी. आर. 85 :
शम्भू नाथ गोयल बनाम **बैंक आफ बड़ौदा और अन्य** । 1,3,6,7,15,16,17,18,19,22,24,25,26,35,36,37,38,40,41

निर्दिष्ट निर्णय

[1985] [1985] 1 उम. नि. प. 1193 = [1985] 1 एस. सी. आर. 544 :
राजेन्द्र झा बनाम **पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला, धनबाद और एक अन्य ;** 1,5,6,23,41

[1980] [1980] 2 उम. नि. प. 911 = [1979] 3 एस. सी. आर. 1165 :
शंकर चक्रवर्ती बनाम **ब्रिटानिया बिस्कुट कंपनी लिमिटेड और एक अन्य ;** 15,33,34,41

[1976] [1976] 1 उम. नि. प. 678 = [1976] 1 एस. सी. आर. 361 :
कूपर इंजीनियरिंग लिमिटेड बनाम **श्री पी. पी. मुंधे ;** 13,14,15,16,32,36,37

[1973] [1973] 3 उम. नि. प. 1 = (1973) 1 एस. सी. सी. 813 :
फ़ायरस्टोन टायर एंड रबड़ कंपनी-आफ इंडिया (प्राइवेट) लिमिटेड के कर्मकार
बनाम **प्रबंधक ;** 31,32,34

[1972] (1972) 4 एस. सी. सी. 304 :
भारतीय स्टेट बैंक बनाम **आर.के. जैन ;** 34

[1972] (1972) 1 एस. सी. सी. 595 :
दिल्ली क्लाथ एंड जनरल मिल्स कंपनी बनाम **लुध बुध सिंह ;** 11,13,29

[1965] [1965] 3 एस. सी. आर. 588 :
कर्मकार बनाम **मोतीपुर शूगर फैक्टरी (प्राइवेट) लिमिटेड ;** 8,28

[1963] [1963] 3 एस. सी. आर. 461 :
मैनेजमेंट ऑफ रिट्ज थियेटर (प्राइवेट) लिमिटेड बनाम **उनके कर्मकार ;** 27

[1962] [1962] 3 एस. सी. आर. 684 :
भारत शूगर मिल्स लिमिटेड बनाम **जय सिंह ;** 27

[1962] ए. आई. आर. 1962 एस.सी. 1334 = [1962] सप्ली. 1 एस. सी. आर. 315 :
देवेन्द्र प्रताप नारायण शर्मा बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य ।** 25

सिविल अपीली अधिकारिता : **2001 की सिविल अपील सं. 2738.**

कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा 1985 की रिट याचिका सं. 11539 में तारीख 3.8.1990 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री आर.एस. हेगड़े (के. आर. नागराज की ओर से)

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री राज कुमार गुप्ता और एस.एन. बरदीयार, अधिवक्तागण

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एन. संतोष हेगड़े ने दिया ।

न्या. हेगड़े – यह अपील इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा पारित निर्णय के विरुद्ध पांच न्यायाधीशों की न्यायपीठ को निर्दिष्ट की गई है जो निम्न प्रकार है :–

> "शम्भू नाथ गोयल **बनाम** बैंक ऑफ बड़ौदा तथा अन्य [1984 (1) एस. सी. आर. 85] और राजेन्द्र झा **बनाम** श्रम न्यायालय [1985 (1) एस. सी. आर. 544] वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चयों में विरोध को ध्यान में रखते हुए हम मामले को बृहत्तर न्यायपीठ को निर्देशित कर रहे हैं जो तीन न्यायाधीशों से अधिक न्यायाधीशों की न्यायपीठ होनी चाहिए । प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान काउंसेल श्री राव ने यह कथन किया है कि विनिश्चयों में कोई विरोध नहीं है । हमारे अनुसार उक्त दलील सही नहीं है । अतः हम यह मामला बृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट कर रहे हैं ।"

2. उपरोक्त आदेश में यह देखा गया है कि प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित हुए विद्वान काउंसेल ने दलील दी थी कि उपरोक्त आदेश में निर्दिष्ट दोनों निर्णयों के बीच कोई विरोध नहीं है । तथापि न्यायपीठ ने इससे भिन्न विचार व्यक्त किया क्योंकि अब हमारे समक्ष प्रत्यर्थियों की ओर से पुनः यह दलील दी गई है कि उपरोक्त दोनों निर्णयों के

बीच कोई विरोध नहीं है, हम मामले के उक्त पहलू की पहले परीक्षा करेंगे ।

3. **शम्भू नाथ गोयल** बनाम **बैंक ऑफ बड़ौदा और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने निम्न अभिनिर्धारित किया :–

> "अतः यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि उन अधिकारों का जो कि विधि के अनुसार नियोजक को श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण के समक्ष औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 या 33 के अधीन की गई उस कार्यवाही में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने के लिए प्राप्त होते हैं, जो कि सेवा के पर्यवसान के आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए की गई हो, नियोजक द्वारा उस समय उचित अनुरोध करते हुए प्रयोग किए जाने चाहिएं जब यह अपना दावा संबंधी कथन या लिखित कथन या कतिपय कार्रवाई करने की अनुज्ञा की ईप्सा या इसके द्वारा की गई कार्रवाई के अनुमोदन की ईप्सा करते हुए आवेदन फाइल करता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन हमारी ओर से किया गया है ।)

4. यह विनिश्चय न्यायालय द्वारा उस प्रक्रम पर दिया गया था जब न्यायालय इसका विनिश्चय कर रहा था कि किस प्रक्रम पर प्रबंधतंत्र आतंरिक जांच के आधार पर किए गए इसके विनिश्चय को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य देने की अनुज्ञा के लिए ईप्सा करने को हकदार है ।

5. यद्यपि **राजेन्द्र झा** बनाम **पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला, धनबाद और एक अन्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने इसी प्रकार के प्रश्न पर विचार किया था । हम पाते हैं कि न्यायालय ने **शम्भू नाथ गोयल**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय के प्रतिकूल कोई विधि अधिकथित नहीं की थी । इस न्यायालय द्वारा राजेन्द्र झा वाले मामले में दिए गए निर्णय का परिशीलन करने पर यह दर्शित होता है कि न्यायालय ने उस मामले का निर्णय केवल उसी मामले के तथ्यों के आधार पर किया था । यह राजेन्द्र झा वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए मतों से स्पष्ट है :–

> "इस प्रकार नियोजकों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा देते हुए श्रम न्यायालय द्वारा पारित किया गया आदेश अपीलार्थी द्वारा स्वीकार किया गया और उसके अनुसार कार्य किया गया है । उसने पहले ही अपने साक्षियों की एक सूची दी है और उन साक्षियों की प्रति परीक्षा की है जिनका साक्ष्य नियोजकों ने प्रस्तुत किया था । इस प्रक्रम पर श्रम न्यायालय के आदेश के अनुसरण में जो कुछ भी किया गया है, उसके विपरीत करना गलत होगा । इसके अलावा अपीलार्थी ने श्रम न्यायालय के आदेश को जो चुनौती दी थी वह विफल हो चुकी है और पटना उच्च न्यायालय का अपीलार्थियों की रिट याचिका खारिज करने वाला आदेश अन्तिम हो गया है ।"

6. इस प्रकार **राजेन्द्र झा**[2] वाले मामले में न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए उपर्युक्त मतों से यह स्पष्ट है कि यह मामला विधि के किसी सिद्धांत को अधिकथित किए बिना उक्त मामले के तथ्यों के आधार पर ही विनिश्चय किया गया है और न ही न्यायालय ने शम्भूनाथ गोयल के मामले में अधिकथित मत के विरुद्ध को व्यक्त किया है । अतः दोनों निर्णयों पर विचार करने पर हमारा यह मत है कि इस न्यायालय द्वारा शम्भूनाथ गोयल और राजेन्द्र झा के मामलों में पारित निर्णयों में कोई विरोध नहीं है ।

7. तथापि इस अपील पर विचार किया जाना यहीं समाप्त नहीं होता क्योंकि अपीलार्थी की ओर से इस न्यायालय द्वारा दिए गए कुछ अन्य पूर्वतर निर्णयों पर अवलंब लिया गया है जिनमें अपीलार्थी के अनुसार शम्भूनाथ गोयल के मामले में व्यक्त किए गए मतों से भिन्न मत व्यक्त किए गए हैं । अतः हम यह उचित समझते हैं कि इस प्रश्न का इस प्रत्यक्षा के साथ कि विवाद की समाप्ति हो जाए, विनिश्चय किया जाए ।

---

[1] [1984] 1 उम. नि. प. 179 = [1984] 1 एस. सी. आर. 85.

[2] [1985] 1 उम. नि. प. 1193 = [1985] 1 एस. सी. आर. 544.

8. इससे पहले कि हम इस प्रश्न की परीक्षा करने के लिए और आगे अग्रसर हों, यह ध्यान में रखना लाभप्रद होगा कि प्रबंधतंत्र द्वारा अपने विनिश्चय को न्यायोचित ठहराने के लिए ऐसे औद्योगिक अधिकरण अथवा श्रम न्यायालय के समक्ष विचारणाधीन साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार कानूनी अधिकार नहीं है । यह वास्तव में एक प्रक्रिया है जो इस न्यायालय द्वारा प्रबंधतंत्र और कर्मकार के बीच विवादों के निपटारे में विलंब और कार्यवाहियों की बाहुल्यता को दूर करने के लिए अधिकथित की गई है । इस प्रक्रिया की उत्पत्ति इस न्यायालय द्वारा **कर्मकार** बनाम **मोतीपुर शूगर फैक्टरी (प्रा.) लि.**[1] के मामले में व्यक्त निम्नलिखित मतों से स्पष्ट होती है :–

> "यदि यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि उन मामलों में जहां नियोजक अपने कर्मचारियों को बिना जांच के पदच्युत कर देता है तो पदच्युति को औद्योगिक अधिकरण द्वारा केवल उसी आधार पर अपास्त कर दिया जाना चाहिए तो इससे अनिवार्यता यह अभिप्रेत होगा कि नियोजक तुरन्त जांच करने के लिए अग्रसर होगा और कर्मचारी को पुनः पदच्युत करने का आदेश पारित करेगा । उस स्थिति में एक अन्य औद्योगिक विवाद उत्पन्न होगा और नियोजक उस जांच का अवलंब लेने का हकदार होगा जो उसने इस दौरान की थी । इस प्रक्रिया से विलंब होगा और द्वितीय अवसर पर यह नियोजक को आतंरिक जांच का लाभ लेने का दावा करने का अधिकार प्रदान करेगा । इसके विपरीत यदि इस प्रकार के मामलों में नियोजक को अधिकरण द्वारा विचार किए जा रहे आक्षेपित पदच्युति के आदेश के मामले के गुणागुणों के आधार पर न्यायोचित ठहराने का अवसर दिया जाता है तो यह स्पष्टतः कर्मचारी के लिए लाभकर होगा । इसीलिए इस न्यायालय ने निरंतर यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि आतंरिक जांच अनियमित, अवैध अथवा अनुचित हो तो अधिकरण नियोजक को एक अवसर अपना पक्षकथन साबित करने के लिए प्रदान कर सकता है और ऐसा करने में अधिकरण गुणागुणों के आधार पर मामले का विनिश्चय करने का प्रयत्न करता है...... ।"

9. उपरोक्त मतों को ध्यान में रखते हुए यदि हम इस प्रश्न पर इस न्यायालय द्वारा दिए गए विभिन्न विनिश्चयों की परीक्षा करें तो यह स्पष्ट होगा कि सभी निर्णयों में इस न्यायालय ने प्रबंधतंत्र को यह अधिकार प्रदान किए जाने पर सहमति दी है, किन्तु ऐसे आवेदन प्रस्तुत करने के समय के विषय में कुछ मतभेद प्रतीत होते हैं । जबकि कुछ निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ऐसा अधिकार प्रबन्धतंत्र द्वारा कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम पर अर्थात् औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 10 अथवा धारा 33(2)(ख) के अधीन फाइल किए गए मूल आवेदन पर आदेश सुनाए जाने के प्रक्रम तक किसी भी प्रक्रम पर उपयोग किया जा सकता है । कुछ अन्य निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उक्त अधिकार का अवलंब केवल प्रारंभ में ही किया जा सकता है ।

10. इस न्यायालय के अनेक निर्णय हैं जिनमें उपरोक्त प्रश्न पर विचार हुआ है, किन्तु हम केवल निम्नलिखित मामलों को निर्दिष्ट करना उपयुक्त समझते हैं क्योंकि इन मामलों में लगभग उन सभी पूर्व निर्णयों पर विचार किया गया है जिनमें इस अपील में अन्तर्ग्रस्त प्रश्न पर विचार किया गया था ।

11. **दिल्ली क्लाथ एंड जनरल मिल्स कं.** बनाम **लुध बुध सिंह**[2] के मामले में इस न्यायालय ने इस विषय बिंदु पर पूर्वतर मामलों को निर्दिष्ट करने के पश्चात् निम्नलिखित सिद्धांत अधिकथित किए हैं :–

> "जब प्रबन्धतंत्र द्वारा आंतरिक जांच की गई हो और प्रबन्धतंत्र उस पर अवलंब लेता है तो प्रबन्धतंत्र अधिकरण से प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में आंतरिक जांच की विधिमान्यता का विचारण करने के लिए प्रार्थना कर सकेगा और अधिकरण के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए अवसर की भी मांग कर सकता है यदि प्रारंभिक विवाधक पर निष्कर्ष प्रबन्धतंत्र के विरुद्ध है । ऐसे मामले में यदि प्रारंभिक विवाधक पर निष्कर्ष प्रबंधतंत्र के विरुद्ध है तो अधिकरण नियोजक को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए एक अवसर प्रदान

---

[1] [1965] 3 एस. सी. आर. 588.

[2] (1972) 1 एस. सी. सी. 595.

करेगा और ऐसा ही समान अवसर कर्मचारी को भी इसके विरोध में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए देगा । किन्तु प्रबंधतंत्र को कार्यवाहियां समाप्त होने के पूर्व अधिकरण के समक्ष यथोचित प्रार्थना करने के द्वारा स्वयं उक्त अवसर का प्रयोग करना चाहिए । यदि कार्यवाही के समाप्त होने के पूर्व ऐसे किसी अवसर का लाभ नहीं उठाया गया है तो नियोजक कोई शिकायत नहीं कर सकता कि अधिकरण ने इस प्रकार का कोई अवसर उपलब्ध नहीं करवाया ।"

12. 'कार्यवाहियां समाप्त होने के पूर्व' शब्दों ने इस संबंध में कुछ संदेह उत्पन्न किए कि क्या प्रबंधतंत्र इसके लिए स्वतंत्र है कि वह किसी भी प्रक्रम पर नए सिरे से साक्ष्य प्रस्तुत करने के इस अधिकार की ईप्सा उस प्रक्रम को सम्मिलित करते हुए कर सके जहां अधिकरण/श्रम न्यायालय ने कार्यवाहियों को समाप्त कर मुख्य मुद्दे पर अपने निर्णय को आरक्षित कर लिया है ।

13. डी.सी.एम वाले मामले में दिए उपरोक्त निर्णय पर इस न्यायालय ने **कूपर इंजीनियरिंग लि.** बनाम **श्री पी.पी. मुन्धे**[1] के मामले में पुनः विचार किया था जिसमें इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :-

"अतः स्पष्ट रूप से हमारी राय यह है कि जब किसी कर्मचारी की पदच्युति या उन्मोचन का मामला औद्योगिक निर्णयन के लिए निर्दिष्ट किया जाता है तो श्रम न्यायालय को चाहिए कि वह पहले प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में यह विनिश्चित करे कि क्या स्थानीय जांच के परिणामस्वरूप नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण हुआ है । जबकि कोई भी जांच स्थानीय जांच नहीं हुई है या नियोजक ने यह स्वीकार किया है कि जांच त्रुटिपूर्ण थी तो कोई भी कठिनाई नहीं होगी । किन्तु जब उस मामले में पक्षकारों के बीच संविवाद हो तो उस प्रश्न को प्रारंभिक विवाधक के रूप में विनिश्चित करना होगा कि क्या वह श्रम न्यायालय के समक्ष कोई साक्ष्य पेश करेगा । यदि वह कोई साक्ष्य पेश नहीं करना चाहता है तो उसे इसके बाद उस विवाद्यक को आगे किसी भी कार्रवाई में उठाने नहीं दिया जाएगा । हमें यह भी स्पष्ट कर देना चाहिए कि किसी भी पक्षकार के लिए यह न्यायोचित नहीं होगा कि जब किसी मामले के संबंध में, यदि इस योग्य हो तो, अन्तिम अधिनिर्णय के बाद भी विवाद उठाया जा सकता है तो वह प्रारंभिक विवाद्यक संबंधी श्रम न्यायालय के विनिश्चय को प्रश्नगत बना कर किसी विवाद में उसके द्वारा किए गए न्यायनिर्णयन में बाधा उत्पन्न करे ।"

14. जैसाकि उपरोक्त से दर्शित है इस न्यायालय ने **'कूपर इंजीनियरिंग**[1]' के मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब अधिकरण/श्रम न्यायालय से आंतरिक जांच की विधिमान्यता का विनिश्चय करने की अपेक्षा की गई थी तो उसका प्रारंभिक विवाधक के रूप में विचारण किया जाना चाहिए और उसके पश्चात् यदि आवश्यक हो तो प्रबन्धतंत्र को नया साक्ष्य प्रस्तुत करने का विकल्प दिया जाना चाहिए था । परन्तु समस्या यहीं पर समाप्त नहीं हुई थी ।

15. **'शम्भू नाथ गोयल**[2]' के मामले में प्रबंधतंत्र साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देने के लिए प्रारंभिक विवाद्यक का विनिश्चय होने तक प्रतीक्षा किए जाने के औचित्य का प्रश्न पुनः उठा क्योंकि आंतरिक जांच की विधिमान्यता के प्रारंभिक विवाद्यक पर विनिश्चय के उपरान्त, चाहे वह जिसके पक्ष में हो, तत्पश्चात् विनिश्चय करने के लिए कुछ अधिक शेष नहीं रहा था । अतः शम्भू नाथ गोयल के मामले में इस न्यायालय ने पुनः विचार किया था । इस निर्णय में न्यायालय ने **शंकर चक्रवर्ती** बनाम **ब्रिटानिया बिस्कुट कं. लि. और एक अन्य**[3] वाले मामले को सम्मिलित करते हुए, जो इस न्यायालय द्वारा **कूपर इंजीनियरिंग** (उपरोक्त) के मामले में पश्चात्वर्ती दिया गया निर्णय था, निम्नलिखित सिद्धांत अधिकथित किए :-

---

[1] [1976] 1 उम. नि. प. 678 = (1976) 1 एस. सी. आर. 361.

[2] [1984] 1 उम. नि. प. 179 = [1984] 1 एस. सी. आर. 85.

[3] [1980] 2 उम. नि. प. 911 = [1979] 3 एस. सी. आर. 1165.

"हमारा यह विचार है कि उपर्युक्त पैरा में निर्दिष्ट कर्मकार के विरुद्ध विरचित आरोप या आरोपों को सिद्ध करने के लिए और साक्ष्य देने हेतु अधिकार का उपयोग करने के लिए श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण की अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए प्रबंधमंडल का आवेदन ऐसा आवेदन है जो उसके द्वारा कतिपय कार्यवाही करने के लिए अथवा उसके द्वारा की गई कार्यवाही का अनुमोदन प्राप्त करने के लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 के अधीन श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण की अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए उनके समक्ष किए गए उनके आवेदन के लंबित रहने के दौरान प्रबंधमंडल द्वारा फाइल किया गया आवेदन हो सकता है । प्रबंधमंडल को अधिनियम की धारा 33 के अधीन उसके द्वारा फाइल किए गए आवदेन में कर्मकार द्वारा फाइल किए गए प्रतिरक्षा के लिखित कथन द्वारा आंतरिक जांच में त्रुटि के संबंध में कर्मकार की दलील के बारे में मालूम था तब भी यदि प्रतिनिधिमंडल ने अपने अधिकार का प्रयोग करने को चुना था तो उसने पहले प्रक्रम पर ही अपना विचार दृढ़ कर लिया होगा और बिना किसी अयुक्तियुक्त विलंब के उस प्रयोजन के लिए आवेदन फाइल किया होगा । किन्तु प्रश्न आंतरिक जांच में कर्मकार के विरुद्ध अभिलिखित दोष के निष्कर्ष के अनुसरण में कर्मकार को दंडित किए जाने के पश्चात् अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश में उद्भूत होता है तब कर्मकार के विरुद्ध विरचित आरोप या आरोपों के समर्थन में और साक्ष्य देने के लिए अनुज्ञा देने हेतु प्रबंधमंडल द्वारा कोई भी आवेदन फाइल करने का कोई प्रश्न ही नहीं हैं क्योंकि कर्मकार द्वारा आंतरिक जांच में त्रुटि निर्देश प्राप्त हो जाने के प्रश्चात् श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण में फाइल किए गए अपने लिखित कथन में बतला दी गई थी तथा प्रबंधमंडल को श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण के समक्ष जांच में उसके द्वारा प्रतिरक्षा में लिखित कथन फाइल किए जाने के पूर्व उस कथन को देखने का अवसर है तथा वह स्वयं लिखित कथन में अवसर के लिए प्रार्थना कर सकता है । यदि वह उस प्रक्रम पर ऐसा करने के लिए विकल्प का प्रयोग नहीं करता है तो उसे उस प्रयोजन के लिए कोई भी आवेदन फाइल करके कार्यवाहियों के किसी भी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर ऐसा करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है जिसके परिणामस्वरूप विलंब हो सकता है और कर्मकार का जोश ठंडा पड़ सकता है और उससे वह समर्पण करने के लिए बाध्य हो सकता है जो कि वह अन्यथा नहीं भी कर सकता है ।"

16. शम्भू नाथ गोयल वाले मामले में दिए गए विनिश्चय पर विचार करते हुए हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि उसमें न्या. वरदराजन द्वारा दिए गए निर्णय में **कूपर इंजीनियरिंग** (उपरोक्त) के मामले को निर्दिष्ट नहीं किया गया है । तथापि न्या. डी. ए. देसाई के सहमति करने वाले निर्णय में इस मामले पर विनिर्दिष्ट रूप से विचार किया गया है । किन्तु गोयल के मामले में निर्णय द्वारा प्रबंधतंत्र को अपनी आंतरिक जांच को न्यायानुमत ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार केवल इस आधार पर दिया गया था यदि उसने ऐसा करने का अधिकार औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 के अधीन प्रस्तुत आवेदन में आक्षेप में सुरक्षित कर लिया था कि प्रबंधतंत्र को अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश प्रस्तुत करना था, जिसका यह अर्थ है कि प्रबंधतंत्र को अपने द्वारा साक्ष्य पेश करने के अधिकार को प्रथम उपलब्ध अवसर पर ही प्रयोग करना था न कि उसके उपरान्त किसी अन्य अवसर पर अधिकरण/श्रम न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों के दौरान ।

17. प्रबंधतंत्र को अधिकरण/श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर उपलब्ध कराने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हमारा यह मत है कि इस न्यायालय द्वारा शम्भूनाथ गोयल के मामले में जारी किए गए निर्देशों के उचित तथा निष्पक्ष होने के कारण उससे अलग मत व्यक्त करने की आवश्यकता नहीं है । प्रबंधतंत्र की ओर से इस प्रक्रिया के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं की जा सकती क्योंकि साक्ष्य प्रस्तुत करने का यह अवसर प्रबंधतंत्र द्वारा मात्र आनुकल्पिक अभिवचन के रूप में ईप्सा की जा रही है और आंतरिक जांच में अवैधता की स्वीकारोक्ति के रूप में । इसके साथ ही यह कर्मकार के लिए भी लाभदायक है क्योंकि यह तथ्य उनकी अवेक्षा में लाया जाएगा कि प्रबंधतंत्र नया साक्ष्य पेश करने वाला है और इसलिए वह अपना खंडन अथवा अन्य साक्ष्य तैयार रख सके । यह प्रक्रिया प्रबंधतंत्र के द्वारा विलम्बित आवेदन प्रस्तुत करने के द्वारा विलम्ब करने की संभाव्यता को दूर करती है जिसके

कारण श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष कार्यवाही लंबी हो सकती है । हमारे विचार से शम्भूनाथ गोयल के मामले में अधिकथित प्रक्रिया उचित तथा निष्पक्ष है ।

18. **शम्भू नाथ गोयल**[1] के मामले में इस न्यायालय द्वारा अभिकथित प्रक्रिया को स्वीकार किए जाने के लिए एक अन्य कारण भी है । यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यह निर्णय 27 सितम्बर, 1983 को परिदत्त किया गया था । इसमें इस न्यायालय के द्वारा धारित लगभग सभी पूर्व निर्णयों को अवेक्षा में लिया गया है और प्रबंधतंत्र के द्वारा साक्ष्य पेश करने के अधिकार का प्रयोग करने के लिए प्रक्रिया अधिकथित की है जिसको हमने न तो अन्यायपूर्ण और न ही अधिनियम के उद्देश्यों और योजना के विपरीत अभिनिर्धारित किया है । यह निर्णय लगभग 18 वर्षों से प्रभावी रहने के कारण, हमारे मतानुसार निर्णीतानुसरण का सिद्धांत हमसे यह अपेक्षा करता है कि इस निर्णय का अनुमोदन यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाए कि एक लंबी अवधि से प्रभावी विनिश्चय को बिना किसी सशक्त कारण के अस्थिर न किया जाए ।

19. उपरोक्त कथन किए गए कारणों के आधार पर हमारा मत यह है कि इस न्यायालय द्वारा **शम्भू नाथ गोयल** बनाम **बैंक ऑफ बड़ौदा और अन्य**[1] के मामले में अधिकथित विधि इस मुद्दे पर सही विधि है ।

20. वर्तमान मामले में अपीलार्थी नियोजक ने साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा की तब तक ईप्सा नहीं की थी जब तक कि श्रम न्यायालय ने यह धारित नहीं कर दिया था कि उनकी आंतरिक जांच दूषित थी । इन तथ्यों पर उपरोक्त कथित सिद्धांतों को लागू करते हुए हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की रिट याचिका सही तौर पर खारिज की है इसलिए यह अपील असफल होती है । यह खर्चों के प्रति आदेश करते हुए खारिज की जाती है ।

न्या. सभरवाल (विसम्मत निर्णय) –

21. संक्षेप में इस मामले में अवधारण हेतु प्रस्तुत प्रश्न यह है कि श्रम न्यायालय के समक्ष औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 के अधीन कार्यवाहियों में यदि नियोजक, कर्मकार के दावाकथन के उत्तर में दाखिल लिखित कथन में यह उपदर्शित करते हुए प्रार्थना नहीं करता है कि श्रम न्यायालय द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचने पर नियोजक द्वारा संचालित की गई जांच जो कर्मकार की सेवा की समाप्ति के आदेश का आधार थी, अवैध है तो नियोजक, कर्मकार के विरुद्ध अवचार के आरोप को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य पेश करेगा किन्तु यदि यह प्रार्थना कार्यवाहियों की समाप्ति के पहले की गई हो तो क्या श्रम न्यायालय द्वारा इस पर गुणागुण के आधार पर विचार किया जाना चाहिए अथवा यह तुरंत निरस्त किए जाने योग्य है ।

22. **शम्भू नाथ गोयल** बनाम **बैंक ऑफ बड़ौदा और अन्य**[1] के मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि उपर्युक्त अवसर को प्राप्त करने के लिए नियोजक को उस समय उचित प्रार्थना करनी चाहिए जब वह अपना दावा कथन अथवा लिखित कथन दाखिल करता है या कोई निश्चित कार्रवाई करने की अनुज्ञा चाहने के लिए आवेदन प्रस्तुत करता है अथवा अपने द्वारा की गई कार्रवाई का अनुमोदन चाहता है और यदि वह उस प्रक्रम तक इनमें से कुछ भी नहीं चुनता है तो उसको कार्यवाहियों के किसी बाद के प्रक्रम पर इस उद्देश्य के लिए प्रार्थना पत्र दाखिल करके ऐसा करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती ।

23. **राजेंद्र झा** बनाम **पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, बोकारो स्टील सिटी, जिला-धनबाद और अन्य**[2] के मामले में यह न्यायालय ऐसे मामले पर विचार कर रहा था जिसमें श्रम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि विभागीय जांच दूषित थी और उसी आदेश के द्वारा कर्मकारों की पदच्युति के आदेश को न्यायानुमत ठहराने के लिए नियोजकों को साक्ष्य पेश करने की मंजूरी दी थी । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आदेश को पारित करने में

[1] [1984] 1 उम. नि. प. 179 = [1984] 1 एस. सी. आर. 85.
[2] [1985] 1 उम. नि. प. 1193 = [1985] 1 एस. सी. आर. 544.

जिसके द्वारा नियोजकों को साक्ष्य पेश करने की मंजूरी दी गई, यह नहीं कहा जा सकता कि श्रम न्यायालय ने बिना अधिकारिता के कार्य किया था । निर्णय में यह अवेक्षा की गई है कि नियोजक ने 33(2)(ख) के अधीन आवेदन प्रस्तुत करने के समय समसामयिक रूप से साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की ईप्सा नहीं की जब आवेदन पर सुनवाई पूर्ण होने के निकट थी किन्तु उसमें अंतिम आदेश पारित होने के पूर्व नियोजकों ने पदच्युति के आदेश को न्यायानुमत ठहराने के लिए साक्ष्य पेश करने के अवसर की ईप्सा की थी ।

24. वर्तमान मामले में दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने उपरोक्त दो मामलों के विनिश्चयों में विरोध की अवेक्षा करते हुए मामले को तीन से अधिक न्यायाधीशों की बृहत्तर न्यायपीठ को प्रत्यर्थियों की ओर से की गई दलील की ऐसा कोई विरोध नहीं है, को नामंजूर करते हुए निर्दिष्ट किया । शम्भू नाथ गोयल के मामले में व्यक्त किए गए मत के प्रतिकूल मत व्यक्त करने वाले अन्य विनिश्चय भी हैं जिनमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि साक्ष्य पेश करने का अवसर प्राप्त करने के लिए नियोजक को कार्यवाहियां समाप्त होने के पहले प्रार्थना करनी चाहिए ।

25. वह परिस्थितियां जिनका वर्तमान मामला उत्पन्न हुआ, संक्षेप में यह है :–

प्रत्यर्थी के विरुद्ध अवचार के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया था । जांच के पश्चात् वह सेवा से अक्तूबर, 1977 में पदच्युत कर दी गई थी । पदच्युति के आदेश की वैधता को श्रम न्यायालय के समक्ष औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा-10 के अधीन चुनौती दी गई थी । श्रम न्यायालय ने तारीख 27 अक्तूबर, 1984 के आदेश के द्वारा प्रारम्भिक विवाद्यक का विनिश्चय किया था और अभिनिर्धारित किया था कि प्रबन्धतंत्र के द्वारा की गई घरेलू जांच निष्पक्ष, उचित अथवा युक्तियुक्त नहीं थी और वह विधि की दृष्टि में मान्य नहीं थी । इसके तुरंत बाद तारीख 19 नवम्बर, 1984 को अपीलार्थी/नियोजक द्वारा श्रम न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी के विरुद्ध अवचार के आरोप को सिद्ध करने के लिए साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा चाहने के लिए आवेदन किया गया था । श्रम न्यायालय द्वारा **शम्भू नाथ गोयल** (उपरोक्त) के मामले में पारित विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए श्रम न्यायालय ने तारीख 10.12.1984 के आदेश द्वारा धारित किया कि प्रबंधतंत्र को साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की प्रत्युत्तर कथन में ही ईप्सा करनी चाहिए थी और क्योंकि ऐसा नहीं किया गया था, इसलिए गुणागुण के आधार पर साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा प्रारम्भिक विवाद्यक पर निष्कर्ष निकाले जाने के बाद नहीं दी जा सकती । अंततः तारीख 26 दिसम्बर, 1984 के अधिनिर्णय द्वारा पदच्युति का आदेश अपास्त कर दिया गया था और पुनःस्थापना का आदेश 50% पिछले वेतन के साथ पारित कर दिया गया था । अधिनिर्णय को रिट याचिका में चुनौती दी गई थी । शम्भूनाथ गोयल के मामले में पारित विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए रिट याचिका उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 3 अगस्त, 1990 को खारिज कर दी गई थी । प्रबंधतंत्र की ओर से दी गई दलीलों कि यदि उनको श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य पेश करने के अवसर से वंचित कर दिया गया तो उन्हें नए सिरे से जांच करने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए, पर चर्चा करते हुए उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने इस न्यायालय द्वारा **देवेन्द्र प्रताप नारायण शर्मा** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] में पारित विनिश्चय को निर्दिष्ट करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि यदि निर्देश में पदच्युति का आदेश इस आधार पर अपास्त किया जाता है कि प्रबंधतंत्र द्वारा की गई जांच जिसके अनुसरण में कर्मकार को सेवा से हटाने का आदेश पारित किया गया था, अवैध था और प्रबंधतंत्र को उनके समक्ष साक्ष्य पेश करने से इस आधार पर रोका जाता है, कि प्रबंधतंत्र ने लिखित कथन में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए प्रार्थना नहीं की थी तब जो कुछ घटित होगा वह यह है कि श्रम न्यायालय के समक्ष जांच किए जाने के बजाए प्रबंधतंत्र के विवेक पर जांच की जा सकती है । उच्च न्यायालय के तारीख 3 अगस्त, 1990 के निर्णय तथा आदेश को इस अपील में चुनौती दी गई है, और विशेष इजाजत याचिका के संबंध में तारीख 26 अगस्त, 1991 को सूचना जारी की गई है और तारीख 6 जनवरी, 1995 को निर्देश आदेश पारित किया गया है ।

26. मैंने न्यायमूर्ति एन. संतोष हेगड़े द्वारा प्रस्तावित निर्णय के प्रारूप का परिशीलन किया है । तद्धीन यह मत

[1] ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 1334 = [1962] सप्ली. 1 एस. सी. आर. 315.

व्यक्त किया गया है कि **शम्भू नाथ गोयल** (उपरोक्त) के मामले में अधिकथित प्रक्रिया उचित तथा निष्पक्ष है । इसका अर्थ यह है कि नियोजक को श्रम न्यायालय के समक्ष कर्मकार के अवचार को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा केवल तभी दी जा सकती है जब उसने इस प्रकार का अधिकार औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अधीन प्रस्तुत आवेदन में या अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश फाइल किए गए आक्षेप और लिखित कथन में इस प्रकार के अधिकार को आरक्षित कर लिया है और न कि उसके उपरान्त श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण समक्ष कार्यवाहियों के दौरान किसी समय उक्त मत को सम्मान देते हुए मैं इससे सहमत नहीं हूं । प्रक्रिया का इस प्रकार से निर्वचन श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण का विवेकाधिकार छीन लेता है । ऐसे मामले में साक्ष्य देने के लिए प्रबंधतंत्र प्रार्थना को स्वीकार करना अथवा अस्वीकार करना आवश्यक रूप से श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के विवेकाधिकार के अन्तर्गत देना चाहिए जो कि सुस्थापित न्यायिक सिद्धांतों के आधार पर प्रयोग किया जाए यदि उक्त विवेकाधिकार के प्रयोग किए जाने में कोई अवैधता कारित की जाती है तो वह उच्चतर न्यायालयों द्वारा ठीक की जा सकती है । श्रम न्यायालय के अधिकारों और अधिकारिता को सीमित करने और साक्ष्य पेश करने की प्रार्थना पर विचार किए जाने से विवर्जित करने के लिए कोई बाध्यकारी कारण नहीं है यदि यह प्रारंभिक प्रक्रम पर नहीं किया जाता है अपितु श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के समाप्त होने के पहले किया गया हो ।

27. कर्मकार की सेवाओं के पर्यवसान को न्यायोचित ठहराने के लिए श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के समक्ष नियोजक द्वारा साक्ष्य पेश करने के अधिकार को इस न्यायालय द्वारा विभिन्न निर्णयों में मान्यता प्रदान की गई है जो पिछले चार दशकों से भी अधिक समय में सुनाए गए हैं । इस प्रकार का अधिकार विवादित नहीं है । **भारत शूगर मिल्स लि.** बनाम **जय सिंह**[1] के मामले में इस न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि अधिकरण ने प्रबंधतंत्र को उनके आवेदन के समर्थन में, यद्यपि उनके द्वारा की गई घरेलू जांच अत्यंत त्रुटिपूर्ण थी, खारिज करने की अनुज्ञा के लिए अपने समक्ष साक्ष्य पेश करने को सही तौर पर मंजूर किया । वह मामला औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(2) के अधीन था । **मैनेजमेंट आफ रिट्ज थियेटर (प्रा.) लि.** बनाम **उनके कर्मकार**[2] के मामले में जो अपील औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 के अधीन निर्देश से उद्भूत हुई, इस न्यायालय ने पुनः यह दोहराया कि यदि प्रारंभिक विवाद्यक पर निष्कर्ष नियोजक के विरुद्ध हो तो नियोजक को अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए ।

28. **कर्मकार** बनाम **मोतीपुर शूगर फैक्टरी (प्राइवेट) लि.**[3] के मामले में यह दोहराते हुए कि नियोजक अधिकरण के समक्ष साक्ष्य पेश कर सकता है, न्यायालय ने यह अवेक्षा की कि यदि नियोजक को अपने मामले में आक्षेपित पदच्युति को गुणागुण पर न्यायानुमत ठहराने का एक अवसर दिया जाए जिस पर अधिकरण द्वारा विचारण किया जा रहा है वह कर्मचारी के लिए फायदेमंद होगा और इसलिए इस न्यायालय ने यह निरन्तर रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि घरेलू जांच अनियमित, अवैध अथवा अनुचित हो तो अधिकरण नियोजक को अपना मामला साबित करने के लिए एक अवसर दे सकता है और ऐसा करने पर अधिकरण गुणागुण के आधार पर स्वयं विचार कर सकता है । यह कथन किया गया कि यह मत उस दृष्टिकोण से संगत है, जिसको औद्योगिक न्यायनिर्णयन सामान्यतया पक्षों के मध्य न्याय करने के विचार से बिना तकनीकी विचारों पर बहुत अधिक निर्भर किए हुए और औद्योगिक विवादों के निस्तारण में विलंब को दूर करने के उद्देश्य से अंगीकृत करता है । यह अवेक्षा की गई कि यदि इस प्रकार का अधिकार प्रदान नहीं किया जाता है तो इसका अपरिहार्य अर्थ यह होगा कि नियोजक तुरन्त जांच करने के लिए अग्रसर होगा और एक बार पुनः पदच्युत करने का आदेश पारित कर देगा और इस प्रक्रम में विलंब होगा और इस प्रकार नियोजक को घरेलू जांच के फायदे का दावा करने के लिए हकदार बनाएगा । यह

[1] [1962] 3 एस. सी. आर. 684.
[2] [1963] 3 एस. सी. आर. 461.
[3] [1965] 3 एस. सी. आर. 588.

निरन्तर रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि सिद्धांतत: इसमें कोई मतभेद नहीं है कि क्या मामला श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के समक्ष धारा 33 के अधीन अथवा औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 के अधीन निर्देश के अन्तर्गत है । किसी भी स्थिति में नियोजक को यह न्यायोचित ठहराना होगा कि पदच्युति अथवा सेवोंमुक्ति का आदेश उचित था । किसी भी मामले में नियोजक को साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार होगा जहां नियोजक कर्मचारी को बिना किसी जांच के पदच्युत करेगा या जांच त्रुटिपूर्ण पाई जाती है ।

29. तथापि उपरोक्त किसी भी मामले में यह प्रश्न कि नियोजक को किस प्रक्रम पर साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, विचार किए जाने के लिए नहीं आया । इस प्रश्न पर **दिल्ली क्लाथ एंड जनरल मिल्स कं.** बनाम **लुध बुध सिंह**[1] के मामले में विचार किया गया था । इस मामले में धारित किया गया कि प्रबंधतंत्र को अधिकरण के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर एक उपयुक्त आवेदन प्रस्तुत करके प्राप्त करना चाहिए इसके पहले कि कार्यवाही समाप्त हो जाए । डी.सी.एम. के मामले में अधिकथित सिद्धांत, जहां तक वर्तमान प्रयोजनों के लिए सुसंगत है, रिपोर्ट के पैरा-61 के उप-पैरा 4 और 5 में अन्तर्विष्ट हैं जो इस प्रकार है :-

> "(4) जब प्रबंधतंत्र द्वारा घरेलू जांच की जाती है और प्रबंधतंत्र उस पर अवलंब करता है तो परवर्ती को यह स्वतंत्रता है कि अधिकरण के समक्ष घरेलू जांच की विधिमान्यता का प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में विचारण किए जाने के लिए प्रार्थना करे और अधिकरण के समक्ष साक्ष्य पेश करने के लिए अवसर की मांग करे यदि प्रारंभिक विवाद्यक पर निष्कर्ष प्रबंधतंत्र के विरुद्ध है । इन परिस्थितियों में जो यद्यपि विस्तृत है और बोझिल हो सकती है, अधिकरण को यह अधिकार है कि प्रथम बार में ही घरेलू जांच की विधिमान्यता का आरम्भिक विवाद्यक के रूप में विचारण करे । यदि अधिकरण को निष्कर्ष प्रबंधतंत्र के पक्ष में है तो प्रबंधतंत्र द्वारा कोई अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की आवश्यकता नहीं होगी । किन्तु यदि प्रारंभिक विवाद्यक पर निष्कर्ष प्रबंधतंत्र के विरुद्ध है तो अधिकरण नियोजक को अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर देने के लिए बाध्य होगा और कर्मचारी को भी खंडन साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार समान रूप से होगा चूंकि अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की प्रबंधतंत्र द्वारा अधिकरण के समक्ष कार्यवाही के प्रक्रम में और विचारण के समाप्त होने के पूर्व की गई थी । जब प्रारंभिक विवाद्यक पर निर्णय प्रबंधतंत्र के विरुद्ध होता है और कर्मचारी अधिकरण के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करता है तो इन परिस्थितियों में क्या होगा; प्रबंधतंत्र घरेलू जांच के निष्कर्ष का लाभ लेने से वंचित हो जाएगा जो तथाकथित अवचार के प्रथम दृष्टया सबूत के रूप में स्वीकार किया जाता है । इसके विपरीत प्रबंधतंत्र को अतिरिक्त साक्ष्य देकर यह साबित करना पड़ेगा कि कर्मचारी अवचार का दोषी है और उनके (प्रबंधतंत्र) द्वारा की गई कार्यवाही उचित है । यह प्रबंधतंत्र और कर्मकार दोनों के लिए उचित और ऋजु नहीं होगा कि अधिकरण साक्ष्य लेने से मना करे और तद्द्वारा उचित जांच करने के पश्चात् प्रबंधतंत्र से पुनः आवेदन प्रस्तुत करने के लिए कहा जाए और कर्मकार को अधिकरण को इसके समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर इस बाबत संतुष्ट होने कि वह अभिकथित अवचार का दोषी था या नहीं था, के फायदे से वंचित किया जाए ।
>
> (5) प्रबंधतंत्र को यह अधिकार है कि वह अपने आदेश को मान्य ठहराने के लिए अधिकरण के समक्ष स्वतंत्र साक्ष्य पेश करने का प्रयास करे । किन्तु प्रबंधतंत्र को अधिकरण के समक्ष समुचित प्रार्थना करके यह अवसर प्राप्त करना चाहिए, इसके पहले कि कार्यवाही समाप्त हो जाए । यदि इस प्रकार का कोई अवसर प्राप्त नहीं किया गया है अथवा प्रबंधतंत्र द्वारा कार्यवाही के समाप्त होने के पूर्व नहीं चाहा गया है तो नियोजक कोई शिकायत नहीं कर सका कि अधिकरण ने उसको कोई अवसर उपलब्ध नहीं करवाया । अधिकरण के समक्ष मात्र जांच की कार्यवाही होगी और उसको यह निर्णय करना होता है कि क्या कार्यवाही उचित रूप से की गई है उसमें अभिलिखित निष्कर्ष भी उचित है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन हमारी ओर से किया गया है)

---

[1] (1972) 1 एस. सी. सी. 595.

30. उपरोक्त सिद्धांतों को अधिकथित करने के पश्चात् न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उपरोक्त मामलों में, जब कार्रवाई लम्बित थी, साक्ष्य पेश करने का अवसर नहीं मांगा गया और न ही उन्होंने (प्रबंधतंत्र ने) स्वयं अवसर को प्राप्त किया जो उनको कानून द्वारा अधिकरण के समक्ष कार्यवाही के लम्बित रहने के दौरान साक्ष्य पेश करने के लिए दिया गया था। यह पुनः धारित किया गया कि यदि इस प्रकार का अवसर मांगा जाता और मना कर दिया जाता अथवा यदि अधिकरण ने साक्ष्य प्राप्त करने से मना कर दिया होता जब वह प्रबंधतंत्र की ओर से पेश करना चाहा गया, ज़ब कार्रवाई उस समय लम्बित थी तो स्थिति पूर्णरूपेण भिन्न होती। इस प्रकार के मामले में यह धारित किया जा सकता है कि अपीलार्थी के अधिकरण के समक्ष साक्ष्य पेश करने के उस अवसर से वंचित कर दिया गया जो उसको कानून के अधीन दिया जाना था, यदि घरेलू त्रुटिपूर्ण अभिनिर्धारित की गई थी।

31. **फायरस्टोन टायर एंड रबड़ कं. आफ इंडिया (प्रा.) लि. के कर्मकार** बनाम **प्रबंधक**[1] के मामले में वह चार सिद्धांत जो वर्तमान मामले के प्रयोजनों के लिए सुसंगत हैं, रिपोर्ट के पैरा 32 के उपपैरा 4,6,7 और 8 में अन्तर्विष्ट है। यह सिद्धांत इस प्रकार है :–

"(4) चाहे नियोजक द्वारा कोई जांच न की गई हो या उसके द्वारा की गई जांच त्रुटिपूर्ण पाई गई हो तो अधिकरण उस आदेश की वैधता और विधिमान्यता की बाबत अपना समाधान करने के लिए नियोजक को अवसर प्रदान करेगा और नियोजक उसके समक्ष साक्ष्य पेश करेगा। यह नियोजक का अधिकार है कि वह अपनी कार्यवाही का औचित्य सिद्ध करने के लिए प्रथम बार साक्ष्य पेश करे।

(6) अधिकरण को तभी कार्यवाही का औचित्य सिद्ध करने में प्रथम बार उसके समक्ष साक्ष्य पेश करने के लिए विचार करने की अधिकारिता प्राप्त होती है जब कोई जांच न की गई हो या नियोजक द्वारा की गई जांच के पश्चात् यह पाया गया हो कि वह त्रुटिपूर्ण है।

(7) इस बात को अभी मान्यता नहीं दी गई है कि अधिकरण बिना किसी और बात पर विचार किए हुए सीधे पदच्युत या सेवोन्मुक्त कर्मचारी का पुनः पदारूढ़ होने का आदेश करे। एक बार जब यह निष्कर्ष निकाल लिया जाता है कि कोई भी आन्तरिक जांच नहीं की गई या उक्त जांच त्रुटिपूर्ण पाई गई है।

(8) एक नियोजक अपनी कार्यवाही का औचित्य सिद्ध करने के लिए अधिकरण के समक्ष प्रथम बार साक्ष्य पेश करने के स्वयं जो अवसर प्राप्त करना चाहता है उसे समुचित प्रक्रम पर इसके लिए मांग करनी चाहिए। यदि ऐसे अवसर की मांग की गई है तो अधिकरण को इनकार करने की कोई शक्ति नहीं है। साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए नियोजक को अवसर प्रदान करना प्रबंधतंत्र और कर्मचारी, दोनों के हित में है तथा इससे अधिकरण स्वतः अभिकथित जांच की बाबत अपना समाधान करने के लिए समर्थ होता है।"

(बल देने के लिए रेखांकन हमारी ओर से किया गया है)

32. इस संबंध में प्रश्न कि समुचित प्रक्रम क्या है, इस पर **कूपर इंजीनियरिंग लि.** बनाम **श्री पी. पी. मुंधे**[2] के मामले में विचार किया गया था। डी.सी.एम. के मामले और फायरस्टोन टायर एंड रबड़ कं. ऑफ इंडिया (प्रा.) लि. के मामलों में उपरोक्त उत्कथित प्रतिपादनाओं की अवेक्षा करने के उपरान्त इस मामले में निम्न अभिनिर्धारित किया गया था :–

"ऊपरवर्णित प्रतिपादनाएं (4), (6) और (7) सुस्थापित हैं। किन्तु यह बात उचित है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार है कि श्रम न्यायालय समुचित प्रक्रमों में अधिकारिता संबंधी मुद्दे की बाबत अपना विनिश्चय विचारित रखे। किसी पक्षकार को न्यायालय से यह प्रार्थना न करने में कि उसे कार्यवाहियों के आरम्भ में या किसी भी स्थिति में उसके निमित्त आदेश के सुनाए जाने के पूर्व अतिरिक्ति साक्ष्य पेश करने का अवसर दिया

[1] [1973] 3 उम. नि. प. 1 = (1973) 1 एस. सी. सी. 813.

[2] [1976] 1 उम. नि. प. 678 = [1976] 1 एस. सी. आर. 361.

जाए, हुए व्यतिक्रम के बुरे परिणाम भुगतने दे । हमारी सुविचारित राय में यह सर्वाधिक अस्वाभाविक और अव्यावहारिक होगा कि किसी पक्षकार से उस समय निश्चित आधार अपनाने की आशा की जाए जबकि श्रम न्यायालय को किसी विवाद के गुणागुण के आधार पर उसे विनिश्चित करने की दृष्टि से जांच प्रारम्भ करने के पूर्व अधिकारिता संबंधी तथ्य का विनिश्चय पहले करना पड़ता है । ऐसे निर्देश में उन्मोचन या पदच्युति के व्यापक विवाद्यक का अवधारण अन्तर्वलित होता है न कि मात्र यह बात कि क्या प्रबंधमंडल ने पदच्युति का आदेश पारित कराने के पूर्व सही प्रक्रिया का अनुकरण किया था । इसके अलावा यदि पदच्युति का आदेश इस आधार पर अपास्त किया जाता है कि जांच त्रुटिपूर्ण थी तो भी पुनः स्थापन के बाद की गई दूसरी जांच के बाद सभी अधिसम्भाव्यताओं को देखते हुए दूसरे निर्देश की बात को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता । इसका क्या परिणाम होगा ? उससे अधिनियम के मुख्य उद्देश्य की पूर्ति अर्थात् औद्योगिक शान्ति की प्राप्ति भी नहीं होगी क्योंकि उस मामले में किए गए अधिनिर्णय के परिणामस्वरूप विवाद का निपटारा नहीं होगा । चूंकि विवाद फिलहाल के लिए ऐसे अधिनिर्णय के परिणामस्वरूप दृष्टि से ओझल हो जाता है । इस कारण से वह पुनर्जीवित हो जाएगा और आद्योगिक शान्ति पुनः भंग हो जाएगी । इसके अलावा किसी औद्योगिक विवाद को शीघ्रता से निपटाने का एक दूसरा उद्देश्य (धारा 15 देखिए) स्पष्ट रूप से समाप्त हो जाएगा जिसके परिणामस्वपरूप दोहरी कार्यवाहियां करनी पड़ सकती हैं । श्रमिकों के तथा नियोजक के हित में तथा औद्योगिक शान्ति बनाए रखने के लिए अधिनियम के अंतिम लक्ष्य को अग्रसर करने की दृष्टि से ऐसी स्थिति से बचना होगा ।

अतः स्पष्ट है कि हमारी राय यह है कि जब किसी कर्मचारी की पदच्युति या उन्मोचन का मामला औद्योगिक निर्णयन के लिए निर्दिष्ट किया जाता है तो श्रम न्यायालय को चाहिए कि वह पहले प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में यह विनिश्चित करे कि क्या स्थानीय जांच के परिणामस्वरूप नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण हुआ है । जबकि कोई भी स्थानीय जांच नहीं हुई है या नियोजक ने यह स्वीकार किया है कि जांच त्रुटिपूर्ण थी, तो कोई भी कठिनाई नहीं होगी । किन्तु जब इस मामले में पक्षकारों के बीच संविवाद हो तो उस प्रश्न को प्रारंभिक विवाद्यक के रूप में विनिश्चित करना पड़ेगा । विनिश्चय कर दिए जाने पर प्रबंधमंडल को यह विनिश्चय करना होगा कि क्या वह श्रम न्यायालय के समक्ष कोई साक्ष्य पेश करेगा । यदि वह कोई साक्ष्य पेश नहीं करना चाहता है तो उसे इसके बाद उस विवाद्यक को आगे किसी भी कार्यवाही में उठाने नहीं दिया जाएगा । हमें यह भी स्पष्ट कर देना चाहिए कि किसी भी पक्षकार के लिए यह न्यायोचित नहीं होगा कि जब किसी मामले के संबंध में यदि इस योग्य हो तो अन्तिम अधिनिर्णय के बाद भी विवाद को उठाया जा सकता है तो वह प्रारंभिक विवाद्यक संबंधी श्रम न्यायालय विनिश्चय को प्रश्नगत बना कर, किसी विवाद में उसके द्वारा किए गए न्यायनिर्णय में बाधा उत्पन्न करे ।" (बल देने के लिए रेखांकन हमारी ओर से किया गया है)

33. उपरोक्त से सुव्यक्त है कि आरंभिक विवाद्यक पर विनिश्चय सुनाने पर कि क्या स्थानीय जांच से नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है, प्रबंधतंत्र को यह निर्णय करना था कि क्या वह श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य पेश करे । वह उपयुक्त प्रक्रम अभिनिर्धारित किया गया था । इन सभी विनिश्चयों की **शंकर चक्रवर्ती** बनाम **ब्रिटानिया बिस्कुट कं. लि. और एक अन्य**[1] के मामले में परीक्षा की गई थी और कूपर इंजीनियरिंग लि. के मामले का विनिश्चय जो अवसर के प्रक्रम को इंगित करता है को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया गया था और अनुमोदन के साथ यह राय पुनः व्यक्त की गई थी कि इस प्रकार के अवसर की ईप्सा की जानी चाहिए थी । न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि प्रार्थना दावा कथन या लिखित कथन में की गई हो इस पर आधारित होते हुए कि कार्यवाही औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 या धारा 10 के अधीन की गई थी, श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण द्वारा इस प्रकार का अवसर अवश्य दिया जाना चाहिए । यदि प्रार्थना तब की गई है जब कार्यवाही समाप्त हो गई हो तो सामान्यतया श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण को साक्ष्य पेश करने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

[1] [1980] 2 उम. नि. प. 911 = [1979] 3 एस. सी. आर. 1165.

इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया गया कि कोई प्रार्थना कार्यवाहियों के किसी प्रक्रम पर नहीं की गई हो तो। कानून के अनुसार श्रम न्यायालय अथवा औद्योगिक अधिकरण का विधि की दृष्टि में कोई कर्तव्य नहीं है कि वह इस प्रकार का अवसर प्रदान करे ।

34. वर्तमान मामले में हमसे किसी ऐसे मामले का विनिश्चय करने की अपेक्षा नहीं की गई है जिसमें नियोजक द्वारा साक्ष्य पेश करने के लिए प्रार्थना नहीं की गई है । हम इस प्रश्न से संबद्ध हैं कि ऐसे मामले में जिसमें प्रारंभिक विवाद्यक पर विनिश्चय के तुरंत बाद साक्ष्य पेश करने के लिए निवेदन किया गया हो किन्तु ऐसा निवेदन लिखित कथन में न किया गया हो जो कर्मकार के दावा कथन के उत्तर में औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 10 के अधीन फाइल किया गया था, तो क्या वह गुणागुण के आधार पर विचार किए बिना सीधे निरस्त होने योग्य है । **शंकर चक्रवर्ती**[1] के मामले में व्यक्त किया गया मत इस प्रकार है :–

> "यदि उस प्रतिपादना के सन्दर्भ में देखा जाए जिसका कि दिल्ली क्लाथ एंड जनरल मिल्स कम्पनी वाले मामले और कूपर इंजीनियरिंग लिमिटेड वाले मामले में निष्कर्ष निकाला गया था तो यह प्रतीत होता है कि कूपर इंजीनियरिंग वाले मामले के विनिश्चय में केवल वह प्रक्रम ही उपदर्शित किया गया है जिस पर कि ऐसा अवसर दिया जाना है किन्तु इस बात की अवहेलना नहीं की जानी चाहिए कि ऐसे अवसर के लिए अनुरोध किया जाना है । आर. के. जैन और दिल्ली क्लाथ एंड जनरल मिल्स कम्पनी के इन पूर्वोत्तर स्पष्ट निर्णयों को भी कि अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने का यह अधिकार प्रबंधमंडल या नियोजक का अधिकार है और समुचित प्रक्रम पर अनुरोध करके ही इस अधिकार का फायदा उठाया जा सकता है तथा विधि में औद्योगिक अधिकरण था श्रम न्यायालय को इस बात के होते हुए भी कि ऐसे अवसर की मांग नहीं की गई थी, स्वप्रेरणा से ऐसा अवसर देने का कोई कर्तव्य नहीं डाला गया है, त्यागा नहीं गया है । जब हम सिद्धांतों के आधार पर मामले की जांच करें तो हम यह इंगित करेंगे कि किसी न्यायिककल्प अधिकरण पर इसके समक्ष हाजिर होने वाले पक्षकारों को अपने अधिकारों पर उसके समक्ष हाजिर होने वाले पक्षकारों को अपने अधिकारों से परिचित कराने की विशेष रूप से उस प्रतिपक्षी पद्धति (एडवर्सरी सिस्टम) में जो कि इन न्यायिकल्प अधिकरणों ने अपनाई हुई है, कोई बाध्यता नहीं होती है । अतः यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि उन अधिकारों का जो कि विधि की दृष्टि से नियोजक को श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण के समक्ष अधिनियम की धारा 10 या 33 के अधीन की उस कार्यवाही में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने के लिए प्राप्त होते हैं जो कि सेवा के पर्यवसान के आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए की गई हों, नियोजक द्वारा उस समय उचित अनुरोध करके ही फायदा उठाया जाना चाहिए जब कि वह दावे का कथन या लिखित कथन फाइल करे अथवा जब वह या तो कोई कार्रवाई का अनुमोदन प्राप्त करना चाहे । यदि ऐसा अनुरोध दावे के कथन में, आवेदन में या लिखित कथन में किया गया हो, तो श्रम न्यायालय अथवा औद्योगिक अधिकरण को ऐसा अवसर अवश्य ही देना होगा । यदि अनुरोध कार्यवाहियों के समाप्त होने के पूर्व किया गया हो तो श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण को मामूली तौर पर साक्ष्य पेश करने का अवसर दे देना चाहिए । किन्तु यदि कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम पर ऐसा कोई अनुरोध न किया गया हो तो विधि में श्रम न्यायालय या औद्योगिक अधिकरण का उस दशा में ऐसा अवसर देने का कोई कर्तव्य नहीं होता है जबकि ऐसा कोई बाध्यकर कर्तव्य विधि की दृष्टि से न तो तथा ऐसे किसी अवसर को देने में असफल रहने से कार्यवाहियां न तो दूषित हो सकती हैं और न दूषित होंगी ।"

35. ऐसा प्रतीत होता है कि शम्भूनाथ गोयल के मामले (उपरोक्त) के पहले यह संदेहास्पद नहीं था कि नियोजक श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियों के समाप्त होने के पूर्व साक्ष्य प्रस्तुत करने के अवसर की ईप्सा कर सकता है । इससे विचलन केवल शम्भूनाथ गोयल के मामले में हुआ था ।

36. **शम्भू नाथ गोयल** के मामले में मुख्य निर्णय कूपर इंजीनियरिंग लि. के मामले के विनिश्चय को निर्दिष्ट

[1] [1980] 2 उम. नि. प. 911 = [1979] 3 एस. सी. आर. 1165.

नहीं करता है । उपरोक्त निर्णय में शंकर चक्रवर्ती के मामले से पैराग्राफ को निर्दिष्ट करने के पश्चात् जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि 'यदि कार्यवाही के समाप्त होने के पहले निवेदन किया गया हो तो श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण को सामान्यतया साक्ष्य पेश करने के अवसर प्रदान कर देना चाहिए', यह मत व्यक्त किया गया कि प्रबंधतंत्र को कर्मकार की दलील से प्रबंधतंत्र के द्वारा अधिनियम की धारा 33 के अधीन फाइल किए गए आवेदन में अथवा कर्मकार के द्वारा अधिनियम की धारा 10 के अधीन फाइल किए गए दावा कथन के बचाव में दाखिल किए गए लिखित कथन के द्वारा आंतरिक जांच में त्रुटि के संबंध में अवगत करवा दिया गया है । यह अवेक्षा करते हुए कि जांच आंतरिक त्रुटि, कर्मकार द्वारा, श्रम न्यायालय अथवा औद्योगिक अधिकरण फाइल किए गए लिखित कथन में बताई गई थी और प्रबंधतंत्र के पास अवसर था कि वह उस कथन की जांच करे, इसके पहले कि वह श्रम न्यायालय अथवा औद्योगिक अधिकरण के समक्ष बचाव में अपना लिखित कथन दाखिल करे और इस प्रकार प्रबंधतंत्र लिखित कथन में ही अवसर के लिए निवेदन कर सकता था । अब यह राय व्यक्त की गई है कि यदि प्रबंधतंत्र उस प्रक्रम पर ऐसा करना नहीं चुनता है तो कार्यवाहियों के किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम में उस उद्देश्य के लिए प्रार्थना पत्र दाखिल करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती जिसका परिणाम विलम्ब हो सकता है जो कर्मकार के मनोबल को खंडित कर सकता है और उसको अभ्यर्पण करने के लिए बाध्य कर सकता है जो वह (कर्मकार) अन्यथा नहीं करता । इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए एक मात्र कारण जो वजनदार प्रतीत होता है, वह यह है कि प्रबंधतंत्र किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर इस प्रकार का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत करने से विवर्जित है जो कार्यवाही में विलम्ब उत्पन्न कर सकती हो ।

37. जैसीकि पहले ही अवेक्षा की जा चुकी है, न्यायमूर्ति वरदराजन द्वारा शम्भूनाथ गोयल वाले मामले में दिए गए मुख्य निर्णय में **कूपर इंजीनियरिंग लि.** वाले मामले (उपरोक्त) पर विचार नहीं किया गया है । कूपर इंजीनियरिंग लि. वाले मामले में, जो तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा पारित विनिश्चय था, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि श्रम न्यायालय पहले प्रारंभिक विवाद्यक का विनिश्चय करे कि क्या स्थानीय जांच के द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है और उस पर (प्रारंभिक विवाद्यक पर) विनिश्चय सुनाए जाने पर प्रबंधतंत्र को यह निश्चय करना होगा कि क्या उसको श्रम न्यायालय के समक्ष कोई साक्ष्य पेश करना है । यदि वह (प्रबंधतंत्र) कोई साक्ष्य पेश करना नहीं चाहता है तो उसको इस विवाद्यक को उसके पश्चात् किसी भी कार्यवाही में उठाने की अनुज्ञा नहीं होगी । यह ध्यान में रखना होगा कि श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष नियोजक को प्रथम बार साक्ष्य पेश करने का अवसर प्रदान करना प्रबंधतंत्र और कर्मचारी दोनों के हित में है । यह भी ध्यान में रखना होगा कि यह अवसर न दिए जाने पर अंततः विश्लेषण में कर्मकार प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकता है । शम्भूनाथ गोयल के मुख्य निर्णय के अलावा हमारे समक्ष अन्य कोई विनिश्चय प्रोद्धृत नहीं किया गया है जिसमें यह धारित किया गया हो प्रबंधतंत्र का साक्ष्य पेश करने का निवेदन अस्वीकार किए जाने योग्य है यदि उन्होंने इसके लिए निवेदन धारा 10 के अधीन निर्देश में दावा कथन के प्रतिउत्तर में दाखिल लिखित कथन में अथवा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अधीन आरंभिक प्रक्रम की कार्यवाहियों में नहीं किया गया है । यहां तक कि न्यायमूर्ति देसाई ने अपने बहुमत के निर्णय में इस पर विचार नहीं किया और यह विचार व्यक्त किया कि यदि इस प्रकार का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया गया हो तो श्रम न्यायालय को यह अधिकार होगा कि वह इस प्रश्न की परीक्षा करें कि साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए अथवा नहीं ।

38. इस न्यायालय द्वारा पारित किए गए विभिन्न विनिश्चयों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस प्रकार की प्रार्थना श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष कार्यवाही के समाप्त होने के पहले की जा सकती है । श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण को इस प्रकार की प्रार्थना पर उसके गुणागुण के आधार पर परीक्षा किए जाने के अपने विवेकाधिकार के प्रयोग को निर्बंधित करने और सद्भावी न पाए जाने पर उससे इनकार करने और कार्यवाहियों में विलंब करने के लिए किया गया पाए जाने पर और कर्मकार के मनोबल को तोड़ने के लिए तथा उसे समर्पण करने हेतु विवश करने के लिए कोई बाध्यकारी कारण नहीं है । यदि **शम्भू नाथ गोयल** वाले मामले (उपरोक्त) की भाषा का प्रयोग किया जाए । सामान्य रूप से इस प्रकार की प्रार्थना यदि प्रारंभिक विवाद्यक पर विनिश्चय के तुरंत

बाद की गई हो, स्वीकार किए जाने योग्य है जैसा कि शंकर चक्रवर्ती वाले मामले में धारित किया गया, इसके पहले कि वह शम्भूनाथ गोयल वाले मामले में न्यायमूर्ति देसाई द्वारा विस्तृत नहीं कर दिया गया । यदि इस प्रकार का निवेदन जांच के अविधिमान्य किए जाने के तुरंत बाद किया गया हो और श्रम न्यायालय उसका सद्भावपूर्ण होना धारित करता हो और पुनः धारित करता हो कि कर्मकार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा तो भी कर्मकार के लिए बंद करने का कोई कारण नहीं है जबकि यह ठीक ढंग से अनेक अवसरों पर धारित किया गया हो विनियोजक के पास कोई जांच अथवा अविधिमान्य जांच की स्थिति में भी श्रम न्यायालय के समक्ष साक्ष्य पेश करने का अधिकार है। इस प्रकार की कार्यवाहियों में अभिवचनों का कड़ाई से पालन किया जाना अपेक्षित नहीं है ।

39. पूर्वगामी कारणों के आधार पर यह धारित करना संभव नहीं है कि यदि नियोजक धारा 10 के अधीन कार्यवाहियों में दाखिल किए गए दावा कथन के उत्तर में अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने की इच्छा व्यक्त नहीं करता है अथवा जब अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अधीन एक प्रार्थना पत्र अनुमोदन के लिए दाखिल किया जाता है तो नियोजक को किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर इस उद्देश्य के लिए प्रार्थना पत्र पेश करने के द्वारा विकल्प का प्रयोग करने की अनुज्ञा नहीं दी जा सकती । नियोजक का निवेदन यदि वह कार्यवाहियों के समाप्त होने के पहले किया गया है, श्रम न्यायालय/औद्योगिक अधिकरण के द्वारा गुणागुण के आधार पर निपटारा किए जाने की अपेक्षा करता है और यह कोई कहने का विषय नहीं है कि श्रम न्यायालय/अधिकरण अपने विवेकाधिकार का प्रयोग सुस्थापित न्यायिक सिद्धांतों के आधार पर करेगा और ऐसा आवेदन करने में नियोजक के सद्भावी होने की परीक्षा करेगा ।

40. निर्णीतानुसरण का सिद्धांत भी लागू नहीं होता है । **शम्भू नाथ गोयल** वाले मामले के पूर्वतर विनिश्चयों में निरंतर रूप से यह मत व्यक्त किया गया था कि साक्ष्य प्रस्तुत करने का निवेदन कार्यवाहियों के समाप्त होने के पहले किया जा सकता है । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले के तुरंत बाद राजेन्द्र झा वाले मामले में समरूप मत व्यक्त किए गए थे । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले में अधिकथित प्रक्रिया, नियोजक और कर्मकार दोनों के लिए उचित, ऋजु और युक्तियुक्त नहीं होगी । उक्त विनिश्चय ने वे प्रास्थिति अर्जित नहीं की है जो निर्णीतानुसरण के सिद्धांत को आकर्षित करे । शम्भूनाथ गोयल वाले मामले में अत्यंत तकनीकी मत व्यक्त किया गया है । इस पर विचार करते हुए कि हम सुविधा, समीचीनता और प्रज्ञा के नियम पर विचार कर रहे हैं और इस पर कोई कानूनी प्रतिषेध नहीं है, प्रक्रिया जो नियोजक और कर्मकार दोनों के हित के लिए फायदेमंद हो, अधिकथित किए जाने योग्य है ।

41. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए मेरा यह मत है कि शम्भूनाथ गोयल वाला मामला सही विधि अधिकथित नहीं करता । शंकर चक्रवर्ती वाले मामले और राजेन्द्र झा वाले मामले में सही विधि अधिकथित की गई है । सही कार्यवाही वह है जो शंकर चक्रवर्ती वाले मामले में कर्मकार के लिए अतिरिक्त रक्षोपायों का उपबंध करते हुए, जैसा कि उपरोक्त निर्दिष्ट है, इंगित की गई है ।

42. उपर्युक्त निष्कर्षों के बावजूद जहां तक प्रस्तुत अपील का संबंध है, यह विचार करते हुए कि श्रम न्यायालय द्वारा 16 वर्षों से भी अधिक समय पहले अधिनिर्णय पारित किया गया था और यह भी कि कर्मचारी भी जैसा कि हमको सूचित किया गया है सेवानिवृत्त हो चुका है, यह उपयुक्त नहीं होगा कि संविधान, 1950 के अनुच्छेद 136 के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप किया जाए । मामले पर इस दृष्टि से विचार करते हुए अपील खारिज की जाती है और पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

न्या. पाटिल –

43. न्यायमूर्ति एन. संतोष हेगड़े द्वारा तैयार किए गए निर्णय के प्रारूप का अध्ययन करने के पश्चात् हम उससे सहमत हैं । न्यायमूर्ति वाई.के. सभरवाल द्वारा तैयार किए गए निर्णय के प्रारूप को, जो बाद में प्राप्त हुआ है, का अध्ययन करने के पश्चात् हम निम्नलिखित कुछ पंक्तियों को जोड़ने की आवश्यकता महसूस करते हैं ।

44. अपनी कार्रवाई को न्यायोचित ठहराने के लिए प्रबंधतंत्र को किस प्रक्रम पर श्रम न्यायालय/अधिकरण की इजाजत साक्ष्य/अतिरिक्त साक्ष्य पेश करने के लिए मांगनी चाहिए, इस प्रश्न पर न्यायमूर्ति हेगड़े ने अपने निर्णय के प्रारूप में विचार किया है और कि न्यायालय/अधिकरण की इस शक्ति पर विचार किया गया है जिसके अधीन

पक्षकारों से किसी विशिष्ट मामले में उक्त मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए साक्ष्य प्रस्तुत करने की अपेक्षा करने अथवा निर्देश देने की शक्ति पर । औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 121(1) के अनुसार न्यायालय/अधिकरण उस प्रक्रिया का अनुसरण कर सकता है जिसको वह मामले की परिस्थितियों में अधिनियम और उसके अधीन विरचित नियमों के उपबंधों के अध्यधीन और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार उचित समझता है । धारा 11(3) के अधीन श्रम न्यायालय/अधिकरण और इस धारा में उल्लिखित अन्य प्राधिकारियों को वही अधिकार प्राप्त हैं जो सिविल न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के अधीन, जब कतिपय मामलों के संबंध में विचारण किया जा रहा हो जिसमें किसी व्यक्ति को हाजिर कराना और उसकी शपथ पर परीक्षा किया जाना सम्मिलित है और दस्तावेजों और तात्विक वस्तुओं के प्रस्तुत किए जाने के लिए बाध्य करने की शक्ति निहित है ।

45. यह निरन्तर रूप से अभिनिर्धारित और स्वीकार किया गया है कि श्रम न्यायालय/अधिकरण के समक्ष कार्रवाई में साक्ष्य के कठोर नियम लागू नहीं हैं किन्तु इस प्रकार की कार्रवाई में नैसर्गिक न्याय के नियमों का अनिवार्य रूप से पालन किया जाना होता है । श्रम न्यायालयों/अधिकरणों को कार्रवाई के किसी भी प्रक्रम में किसी भी प्रकार के साक्ष्य के लेने (मंगाने) का अधिकार प्राप्त है यदि मामले के तथ्य तथा परिस्थितियां किसी विशिष्ट परिस्थिति में न्याय के उद्देश्य की पूर्ति के लिए ऐसा अपेक्षित कर दे । हम दोहराते हैं कि अनावश्यक विलंब और कार्रवाई के बाहुल्य का अनदेखा करने के लिए प्रबंधतंत्र को अपनी कार्रवाई के समर्थन में अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए न्यायालय/अधिकरण की आज्ञा अपने लिखित कथन में ही मांगनी चाहिए । किन्तु पक्षों से कार्रवाई के किसी भी प्रक्रम में इसके पहले कि वह समाप्त हो जाए अतिरिक्त साक्ष्य, दस्तावेजों को प्रस्तुत करना सम्मिलित करते हुए प्रस्तुत करने के लिए अपेक्षा करना अथवा निर्देश देना न्यायालय/अधिकरण के अधिकारों में बाधा डालना नहीं समझा जाना चाहिए यदि वह न्याय के हित में हो तथा उचित एवं आवश्यक प्रतीत होता हो ।

अपील खारिज की गई ।

शु./अनू.

[2002] 3 उम. नि. प. 198

महाराष्ट्र राज्य

बनाम

भरत छगनलाल रघानी और अन्य

11 जुलाई, 2001

न्यायमूर्ति के.टी. थॉमस और न्यायमूर्ति आर.पी. सेठी

आतंकवादी और विध्वंसकारी क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1987 – धारा 15 [सपठित आतंकवादी और विध्वंसकारी क्रियाकलाप (निवारण) नियम, 1987 – नियम 15(5)] – पुलिस अधिकारी द्वारा धारा 15 के अधीन अभिलिखित की गई संस्वीकृति के मजिस्ट्रेट के पास भेजे जाने पर नियम 15(5) के अधीन मजिस्ट्रेट का कर्तव्य – मजिस्ट्रेट संस्वीकृति कथन वाले लिफाफे को न तो खोलने को और न ही संस्वीकृति की स्वैच्छिक प्रकृति के संबंध में अपनी संतुष्टि करने को आबद्ध है – मजिस्ट्रेट, अभियुक्त को संस्वीकृति के दौरान तंग किए जाने, यंत्रणा दिए जाने के संबंध में उसके द्वारा किए गए कथन को ही केवल अभिलिखित कर सकता है – अभिहित न्यायालय ने संस्वीकृति कथन की स्वैच्छिक प्रकृति के संबंध में मजिस्ट्रेट द्वारा जांच किए जाने के अभाव में उसे साक्ष्य में स्वीकार न करके त्रुटि कारित की थी ।